मंजीत प्रकाश व अन्य

बनाम

शोभा देवी व अन्य

2008 की आपराधिक अपील सं. 1113

18 जुलाई, 2008

(डॉ. अरिजीत पसायत और हरजीत सिंह बेदी, जे.जे.,)

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

धारा 439 (2) - जमानत रद्द करना-निर्धारित कियाः जब उच्च अदालत ने जमानत रद्द करने का कोई कारण नहीं बताया है ऐसे आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता। मामला उच्च न्यायालय को आवेदन पर नए सिरे से निर्णय लेने और उसका निपटान करने हेतु प्रेषित किया गया।

उत्तरदाता नं. 1 ने उसके पति और उनके परिवार के चार सदस्य के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज किया। सभी अभियुक्तों को 3.5.2006 पर अस्थायी जमानत दी गई थी। आदेश की पुष्टि 7.9.2006 पर की गई थी। हालांकि, उच्च न्यायालय द्वारा तीनों अपीलार्थियों को दी गई जमानत को रद्द किया गया।

तत्काल अपील में अपीलार्थी के लिए यह तर्क दिया गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा जमानत रद्द करने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया था।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया: 1.1 यह एक साधारण कानून है कि जो जमानत देने और जमानत रद्द करने के लिए अलग-अलग आधार है। जमानत रद्द करना एक कठोर आदेश है और इसे हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए क्योंकि यह दी गई व्यक्तिगत स्वतंत्रता को छीन लेता है परंतु कोई ऐसा व्यक्ति

जिसे जमानत दी गयी हो, वह न्याय के मार्ग में हस्तक्षेप करने या साक्ष्य या गवाहों के साथ छेड़छाड़ करने या धमकी देने का प्रयास या ऐसी ही गतिविधियों में लिप्त होता है जो सुचारू जांच या मुकदमे में बाधा उत्पन्न करता है, तो जमानत रद्द की जा सकती है।

असलम बाबालाल देसाई बनाम महाराष्ट्र राज्य 1992 (1) पूरक एससीआर 545; कल्याण चंद्र सरकार बनाम राजेश रंजन उर्फ पप्पु यादव व अन्य। 2004 (7) एस.सी.सी. 528 भरोसा किया।

1.2 भले ही जमानत देने वाले न्यायालय द्वारा सबूत की पुनः सराहना करने से बचा जाना चाहिए, जमानत रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 439 (2) आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय इस बात पर विचार कर सकता है कि क्या अप्रासंगिक सामग्री को लिया गया था। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह ज्ञात नहीं है कि जमानत की प्रार्थना स्वीकार करने के लिए न्यायालय द्वारा अप्रासंगिक सामग्री का वजन किस हद तक था। (पैरा 11) (1147-ई, एफ)

पूरन बनाम रामबिलास और अन्य 2001 (6) एस.सी.सी. 338-संदर्भित।

1.3 तत्काल मामले में, चूंकि उच्च न्यायालय ने जमानत रद्द करने का निर्देश देने के लिए किसी भी कारण का संकेत नहीं दिया, विवादित आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता एवं रद्द किया गया। मामला नए सिरे से दर्ज करने और दायर आवेदन का निपटारा तय करने के लिए उच्च न्यायालय को भेजा जाता है। (पैरा 14) (1148 - एफ,जी)

कानून मामला संदर्भ

1992 पूरक 1 एस.सी.आर. 545 भरोसा किया (पैरा 6)

2004 (7) एस.सी.सी. 528 भरोसा किया (पैरा 7)

2001 (6) एस.सी.सी. 328 संदर्भित (पैरा 12)

क्रिमिनल अपीलेट न्याय निर्णयः आपराधिक अपील 2008 की सं. 1113।

सी.आर.एल. विविध 2006 की सं. 48109 में पटना उच्च न्यायालय के अंतिम आदेश दिनांक 12.7.2007 से।

अपीलार्थियों के लिए गौरव अग्रवाल।

उत्तरदाताओं के लिए गोपाल सिंह, मनीष कुमार, रजनीश प्रसाद और अमित पवन।

न्यायालय का निर्णय दिया गया-

डॉ. अरिजीत पासायत, जे.

1. अनुमति दी गयी।

2. अपीलार्थी ने पटना उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 2006 की आपराधिक विविध प्र.सं. 10719 में दिनांक 07.09.2006 को जमानत के आदेश को रद्द करने के आदेश को चुनौती दी थी। अप्रार्थी संख्या 1 द्वारा जमानत रद्द करने के लिए आवेदन दायर किया गया था। अपीलार्थी 1, 2 और 3 को अभियुक्त संख्या 1, 2 और 4 के रूप में प्रस्तुत किया गया है। पाँच व्यक्तियों को 2006 की आपराधिक विविध मामला सं. 10719 दिनांकित 7.9.2006 में जमानत का लाभ दिया गया। इस आदेश में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इस विवादित आदेश में वर्तमान अपीलार्थी का जमानत आवेदन निरस्त किया गया है जबकि दो अन्य महिलाओं का जमानत आवेदन पत्र निरस्त नहीं किया गया।

2. हालांकि अपील के समर्थन में विभिन्न बिंदुओं पर आग्रह किया गया था मुख्य रूप से यह प्रस्तुत किया गया था कि जमानत रद्द करने का कोई कारण नहीं बताया गया है।

3. प्रतिवादी नंबर 1-शिकायतकर्ता के लिए विद्वान वकील प्रस्तुत किया कि हालांकि जमानत को रद्द करने के आदेश में जमानत को रद्द करने के लिए परिस्थितियों पर बारीकी से विचार नहीं किया गया है, यह आदेश में है।

4. अपीलार्थी और अन्य दो जिनके संबंध में उच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप नहीं किया है, इनको आदेश दिनांकित 03.05.2006 द्वारा अस्थायी जमानत दी गई थी, यह आदेश 7.9.2006 पर पुष्ट हुआ। यह कहा गया था कि पति और पत्नी वैवाहिक घर में साथ रह रहे हैं। इससे पहले अपीलार्थी सं. 2 द्वारा वैवाहिक संबंधों की पुर्नस्थापना बाबत् वाद किया गया था जिसे अनंतिम जमानत की पुष्टि होने के बाद वापिस ले लिया गया तथा विवाह विच्छेद के लिए वैवाहिक मामला सं. 34/2006 दायर किया। शिकायतकर्ता के अनुसार दिनांक 10.10.2006 को एक घटना हुई तथा इस कारण जमानत निरस्त की गयी।

5. उच्च न्यायालय, जैसा कि सही है अपीलार्थियों के विद्वान वकील द्वारा तर्क दिया गया है कि जमानत रद्द करने का निर्देश देने के कारणों का उल्लेख किया, उल्लेख नहीं किया गया।

6. यह एक साधारण कानून है कि जो जमानत देने और जमानत रद्द करने के लिए अलग-अलग आधार है। बहुमत से पारित आदेश असलम बाबालाल देसाई बनाम महाराष्ट्र राज्य में ऐसी परिस्थितियाँ थीं जब दी गयी जमानत रद्द की जा सकती थी वे निम्नलिखित शब्दों में प्रकाशित की जाती हैः (एससीसी पीपी 289-90, पैरा 11)

"11. संहिता की धारा 57 और 167 के संयुक्त पठन पर यह स्पष्ट है कि विधायी उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि एक व्यक्ति को हिरासत में लेने के बाद त्वरित जांच की जाये। यह उम्मीद की जाती है कि जांच 24 घंटे के भीतर पूरी की जानी चाहिए और यदि जांच 15 दिन के भीतर पूरी की जाना संभव नहीं है तथा संहिता की धारा 167 (2) के परंतुक के खंड (ए) में निर्धारित समय के भीतर आकर्षित करती है तब कानून उम्मीद करता है कि जांच प्रेषण से पूरी होनी चाहिए तथा मजिस्ट्रेट का दायित्व है कि वह जांच पर ध्यान दे जिससे जांच एजेंसी द्वारा कानून का दुरूपयोग न हो। जैसा कि पहले कहा गया है, विधायी इतिहास से पता चलता है कि धारा 167 (2) के परंतुक की शुरूआत से पहले जांच एजेंसियां को अधिकतम 15 दिन की अनुमति दी गई थी जो उप-धारा (2) में थी। अनुभव से यह समय अपर्याप्त पाया गया खास तौर पर जटिल प्रक्ररणों में तथा इस लिए यह प्रावधान मजिस्ट्रेट द्वारा अपराधी को 15 दिन तक कस्टडी में लेने के लिए जोडा गया। लेकिन प्रावधान (ए) के तहत बताये गये लिमिट तक नहीं। हम यहाँ उल्लेख कर सकते हैं कि परंतुक द्वारा निर्धारित अवधि को राज्य संशोधनों द्वारा बढ़ाया गया है तथा जहाँ भी इस तरह का विस्तार होगा, वहाँ परंतुक को उसी के अनुसार पढ़ना होगा। जांच एजेंसी द्वारा जांच समय पर पूर्ण नहीं करने के कारण अभियुक्त को धारा 167(2) के कारण रिहा किये जाने के पीछे आशय एवं उद्देश्य यह है कि जाँच एजेंसी में जाँच को तुरंत और वैधानिक समय सीमा के भीतर पूरा करने के लिए तात्कालिकता की भावना पैदा की जाए। धारा 167 की उपधारा 2 के तहत दी गयी जमानत का

संबंध अध्याय 33 धारा 437 व धारा 439 के तहत आदेश को पारित माना जाना था। बाद के प्रावधानों के तहत एक बार जब रिहाई का आदेश कानून की कल्पना द्वारा धारा 437 (1) या (2) के तहत पारित किया जाता है या धारा 439 (1) यह एक स्वाभाविक परिणाम के रूप में निम्नलिखित है कि उक्त आदेश को धारा 437 की उप-धारा (5) के तहत या धारा 439 की उप-धारा (2) रद्द किया जा सकता है। जैसा कि रघुबीर सिंह बनाम बिहार राज्य में कहा गया है कि 437 (5) तथा 439 (2) के तहत रद्द करने के लिए आधार समान हैं, अर्थात धारा 437 (1) (2) या 439 (1) धारा के तहत दी गई जमानत को रद्द किया जा सकता है जहाँ (1) अभियुक्त अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग इसी तरह की आपराधिक गतिविधि से करता है। (2) जाँच के क्रम में हस्तक्षेप करता है, (3) साक्ष्य या गवाहों के साथ छेड़छाड़ करने का प्रयास, (4) गवाहों को धमकी देता है या इसी तरह की गतिविधियों में लिप्त होता है जो सुचारू जांच में बाधा आएगी, (5) संभावना है उसके दूसरे देश भागने का, (6) खुद को बचाने का प्रयास भूमिगत हो जाने या जांच एजेंसी के लिए अनुपलब्ध होने से (7) खुद को उसकी जमानत आदि की पहुंच से परे। ये आधार उदाहरणात्मक हैं और संपूर्ण नहीं। यह भी याद रखना चाहिए जमानत की अस्वीकृति एक सामान्य आधार पर है लेकिन जमानत रद्द करना एक कठोर आदेश है क्योंकि यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करता है इसलिए इसे हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए।"

7. अतः यह स्पष्ट है कि जब कोई व्यक्ति जिसे जमानत अनुमति दी गई है या तो न्याय के मार्ग में हस्तक्षेप करने की कोशिश करे या साक्ष्य या गवाहों के साथ

छेड़छाड़ करने का प्रयास करे या गवाहों को धमकी दे या इसी तरह की गतिविधियों में लिप्त हो जिससे जांच या विचारण बाधित हो, दी गई जमानत रद्द की जा सकती है। जमानत की अस्वीकृति एक सामान्य आधार पर है लेकिन जमानत रद्द करना एक कठोर आदेश है क्योंकि यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करता है इसलिए इसे हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए।

8. कल्याण चंद्र सरकार बनाम राजेश रंजन उर्फ पप्पु यादव और अन्य। (2004 (7) एस.सी.सी. 528) के पैरा 11 में इसे निम्नानुसार नोट किया गया हैः

> "11. जमानत देने या अस्वीकार करने के संबंध में कानून बहुत तय है। जमानत देने वाली अदालत को इसका प्रयोग न्यायिक तरीके से करना चाहिए न कि एक मामले के रूप में। हालांकि जमानत देने के चरण में एक विस्तृत साक्ष्य की जांच और मामले के गुणावगुण को नहीं देखना चाहिए। ऐसे आदेशों में प्रथम दृष्टया कारणों को इंगित करने की आवश्यकता है यह निष्कर्ष निकालते हुए कि जमानत क्यों दी जा रही थी, विशेष रूप से जहाँ आरोपी पर गंभीर अपराध करने का आरोप है। अपराध। ऐसे कारणों से रहित किसी भी आदेश को मन के गैर-अनुप्रयोग से किया गया आदेश समझा जाएगा। यह भी आवश्यक है कि अन्य परिस्थितियों के अलावा, जमानत देने से पहले निम्नलिखित कारकों पर भी विचार करने के लिए जमानत देने वाला न्यायालय के विचार योग्य हैंः
>
> (क) आरोप की प्रकृति और इसकी गंभीरता दोषसिद्धि के मामले में दंड और की प्रकृति समर्थन साक्ष्य।

(बी) गवाह के साथ छेड़छाड़ की उचित आशंका या शिकायतकर्ता को धमकी की आशंका।

(ग) आरोप के समर्थन में न्यायालय को प्रथम दृष्टया संतुष्टि। (राम गोविंद उपाध्याय बनाम सुदर्शन सिंह (2002 (3) एससी 598) और पूरन बनाम रामबिलास (2001 (6) एससीसी 338)।

9. उक्त मामले में यह भी उल्लेख किया गया था कि धारा 437 (1)(i) के तहत दी गई शर्तें संहिता की धारा 439 के तहत भी मंजूर करने के लिए अनिवार्य हैं।

10. पैरा 14 में इसका उल्लेख इस प्रकार किया गया हैः

"14. हम पहले ही तर्कों से देख चुके हैं अपीलार्थी के लिए विद्वान वकील द्वारा वर्तमान अभियुक्त की तरफ से इससे पहले जमानत देने के लिए सात आवेदन किए गए थे जिन्हें उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया था और इस तरह के कुछ खारिज किये गये आदेश की इस न्यायालय द्वारा भी पुष्टि की गई है। अभिलेखों से पता चलता है कि जब जमानत देने के लिए पाँचवाँ आवेदन था उसे उच्च न्यायालय द्वारा अनुमति दी गई है। इसे ही इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई और इस न्यायालय ने भारत संघ द्वारा दायर अपील की अनुमति देकर उक्त चुनौती को स्वीकार कर लिया है। भारत संघ और अन्य द्वारा दायर अपील की अनुमति देना और उच्च न्यायालय द्वारा दी गई जमानत को रद्द कर दिया आपराधिक अपील सं. 745 में इस न्यायालय का आदेश 2001 का दिनांक 25-7-2001। उक्त जमानत को रद्द करते समय इस न्यायालय ने विशेष रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि वर्तमान अभियुक्त एक साल से अधिक समय

से हिरासत में था (उस समय) और आगे का तथ्य कि पहले को अस्वीकार करते हुए आवेदन, उच्च न्यायालय ने भविष्य में जमानत आवेदन, नवीनीकरण करने की स्वतंत्रता दी थी, यह संहिता की धारा 437 (1) (i) के तहत परिकल्पित आधार नहीं थे। इस न्यायालय में भी विशिष्ट शर्तों में कहा गया था कि इसके तहत निर्धारित शर्त धारा 437 (1) (i) जमानत देने के लिए संहिता की धारा 439 में भी अनिवार्य है। आक्षेपित आदेश में यह देखा गया है कि उच्च न्यायालय ने अवधि दी है अभियुक्त द्वारा पहले से ही कारावास और आधार के रूप में निकट भविष्य में मुकदमे के समापन की संभावना नहीं अभियुक्त को जमानत पर बढ़ाने के लिए पर्याप्त, इसके बावजूद तथ्य यह है कि अभियुक्त पर दंडनीय अपराधों का आरोप है आजीवन कारावास या यहाँ तक कि मृत्युदंड भी। ऐसे मामलों में, हमारी राय में, केवल यह तथ्य है कि अभियुक्त कुछ समय के लिए कैद में रहा है। (इस मामले में तीन साल) जमानत का आधार नहीं है, और न ही यह तथ्य कि मुकदमे के समाप्त होने की संभावना नहीं है निकट भविष्य या तो स्वयं या अवधि के साथ युग्मित अपीलार्थी को बड़ा करने के लिए कारावास पर्याप्त होगा। जमानत पर जब कथित अपराध की गंभीरता गंभीर हो और गवाहों के साथ छेड़छाड़ के आरोप हैं उस अवधि के दौरान आरोपी जो जमानत पर था।

11. भले ही जमानत देने वाले न्यायालय द्वारा सबूत की पुनः सराहना करने से बचा जाना चाहिए, जमानत रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 439 (2) आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय इस बात पर विचार कर सकता है कि क्या अप्रासंगिक सामग्री को लिया गया था। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह ज्ञात नहीं

है कि जमानत की प्रार्थना स्वीकार करने के लिए न्यायालय द्वारा अप्रासंगिक सामग्री का वजन किस हद तक था।

12. पुरण बनाम रामबिलास और अन्य। (2001 (6) एससीसी 338) में निम्नलिखित रूप में नोट किया गया थाः

> "11. इसके अलावा, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अनुचित आदेश या विकृत आदेश को रद्द करने का आशय जमानत रद्द करने की अवधारणा से बिल्कुल अलग इस आधार पर है कि अभियुक्त ने अपना गलत आचरण किया है या कुछ नए तथ्यों के कारण इस तरह के रद्द करने की आवश्यकता होती है।यह स्थिति इस न्यायालय द्वारा गुरचरण सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) (एस.सी.सी.पी. 124, पैरा 16) में स्पष्ट है।
>
> "यदि, तथापि, सत्र न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्ति को जमानत देने के लिए स्वीकार कर लिया है तब राज्य के पास दो विकल्प हैं। वह सत्र न्यायाधीश के पास जा सकते हैं क्योंकि ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं जो पहले नहीं थीं जो राज्य को ज्ञात है और आवश्यक है। राज्य उच्च न्यायालय का भी धारा 439 (2) के तहत रुख कर सकता है। लेकिन जब राज्य सत्र न्यायाधीश के जमानत देने के आदेश से व्यथित है और कोई नई परिस्थितियाँ नहीं हैं जो पहले से मौजूद को छोड़कर विकसित हो चुके हैं, राज्य के लिए सत्र न्यायाधीश की तरफ पुनः कदम करना व्यर्थ है तथा विधि के दृष्टि में उच्च न्यायालय की तरफ जमानत के निरस्तिकरण के लिए जाना सक्षम है।

यह स्थिति इस प्रकार है जैसे अधीनस्थ पद से सत्र न्यायालय एवं इसी तरह उच्च न्यायालय की।"

13. पुरन के मामले में उजागर की गई विकृति (ऊपर) इस तथ्य से भी प्रवाहित हो सकता है कि असंगल मेटिरियल पर विचार कर लिया गया एवं अप्रासंगिक मेटिरियल को जमानत देने का आदेश में भेद्यता जोड़ने पर विचार किया गया है अप्रासंगिक सामग्री सारवान प्रकृति की होनी चाहिए और ना की तुच्छ प्रकृति की।

14. चूंकि उच्च न्यायालय ने जमानत रद्द करने का निर्देश देने के लिए कोई कारण नहीं बताया है, विवादित आदेश को बनाए नहीं रखा जा सकता है और इसे रद्द किया जाता है। मामले को नए सिरे से तय करने और दायर आवेदन का निपटारा करने के लिए मामला उच्च न्यायालय को भेजा जाता है। हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमने मामले के गुण-दोष राय कुछ भी व्यक्त नहीं किया है।

15. अपील की अनुमति उपरोक्त सीमा तक दी जाती है।

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अजय सिंगारिया (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।